भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-17, अंक-6 रविवार, 26.6.94	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी जून, 1994	वार्षिक चन्दा-30.00 प्रति अंक : 3.00

जीवन की सार्थकता लाई.....गुरूपूर्णिमा

अहो ! गुरुपूर्णिमा का महामंगलकारी अवसर आ रहा है.....प्रगट के उपासकों का तो हर त्यौहार जगत से निराला ही होता है। मानो 'होली'–तो भीतर के 51 भूतों की-'स्वभावों की होली जलानी... 'दशहरा' हो तो–भीतर का रावण जलाना... 'दीवाली' हो–तो अपने स्वभाव बदल कर साधु के संबंध से रोज दीवाली मनाना.....इसी प्रकार 'गुरुपूर्णिमा'.....प्रगट की निष्ठा रखने वालों के लिए गुरुपूजन एकदम अलग प्रकार का होता है.....प्रगट के भक्तों को तो पल-पल अपने गुरु के पूजन रूप ही क्रिया करनी होती है.....

– मेरे गुरु किस प्रकार राजी हों?
– मेरे गुरु के लिए मैं क्या कर दूं?
– मेरे गुरु की मर्जी क्या है?
– मेरे गुरु को क्या पसंद है?
– मेरे गुरु की शान किस प्रकार बढ़े?

बस ! यही एक-एक सैकण्ड की तमन्ना कि मेरे गुरु की आँख का ईशारा क्या है?

जो शिष्य इस प्रकार सजाग रहकर अपने गुरु की ओर ही एक मात्र निगाह रखकर जिये.... यही प्रगट के शिष्य की पहचान कही जाए....

और....स्वामिनारायण भगवान का तो अपने भक्तों पर अतिशय अनुग्रह है कि उन्होंने वरदान दे दिया कि मैं इस पृथ्वी पर अपने जैसे गुणातीत संतों द्वारा अखंड रहूँगा और आज तक वह गुणातीत परम्परा चलती ही आई है....निरन्तर चलती रहेगी। इससे भी अधिक भगवान स्वामिनारायण का आशीर्वाद है कि जीव को देह रहते हुए अक्षरधाम का सुख, शांति आनंद प्राप्त हो। इसी हेतु गुरु गुणातीत ने सभी साधनाओं, जैसे तप, दान, व्रत, एक टांग पर खड़े होकर साधना करना, उल्टे सिर लटकना, ठण्डे पानी में खड़े रहना इत्यादि साधनों पर सेरे लगा दिए। बस ! प्रत्यक्ष स्वरूप का दर्शन, सेवा समागम....वह जो कहे दो हाथ जोड़ कर करना, उसकी शरण में पड़े रहना ही शिष्य को प्रभु के मार्ग पर सफल बना सकती है। उसी में सारी साधना की पूर्णाहुति ! व देह रहते अक्षरधाम का सुख, शांति, आनंद मौज में मिल जाए। जैसे मच्छर कितनी भी कोशिश करेगा, तो भी अधिक ऊँचा नहीं उड़ पाएगा, लेकिन

यदि गरूड़ के पंख में बैठ जाएगा तो बिना साधन वह भगवान के धाम में जाकर बैठ जाएगा... सो, प्रगट स्वरूप के मिलने से तो मानो अपनी लॉटरी पक गई.... !

स्थूल शरीर के लिए जैसी और जितनी अनिवार्यता 'प्राणवायु' की है, वैसे ही आत्मा के लिए सच्चे संत-सच्चे गुरू का संबंध आवश्यक है। सच्चे गुरू शिष्य की चेतना को उर्ध्वगामी बना कर आत्यंतिक मुक्ति की राह पर अग्रसर करता है। सच्चे गुरू मिलने पर ही प्रभु के प्रति आस्तिकता व आन्तरिक गुणों का समुचित विकास होता है। वासना का क्षय और प्रकृति-स्वभाव को दिव्यता में परिवर्तित करे-जीव का जीवभाव टालकर ब्रह्मभाव में स्थित कर के हमें परमात्मा में जोड़े-वही सत्य स्वरूप सच्चा गुरू है। प्रभु का ऐसा अखंड धारक संत ही हमारी आत्मा पर पड़े हुए बुरे संस्कारों के धब्बे धोकर उसे निर्मल व स्वच्छ बना सकता है। इसलिए तो कहा जाता है-प्रभु प्राप्ति के लिए गुरूमार्ग ही सबसे सरल व सुगम मार्ग है।

1. शिष्य का गुरू के प्रति अनन्य प्रेम-गुरुकृपा प्राप्त करने का प्रथम सोपान है।
2. गुरू के वचन में विश्वास व अनन्य एकाग्रता-गुरूकृपा प्राप्त करने का द्वितीय सोपान है।
3. मन, बुद्धि, चित्त का total समर्पण-गुरूकृपा पाने का तृतीय सोपान है।
4. निरहंकार बनकर हर एक के पास दासभाव से जीना—गुरूकृपा पाने का अंतिम सोपान है।

भगवान रखे साधु को सिर्फ एक ही चाहना होती है कि वह किस प्रकार अपने सेवक को जन्म-मरण, प्रकृति स्वभाव के बंधनों से मुक्त करके उसे प्रभु की मूर्ति का सुख दे दे... दूसरी ओर यह पंक्ति खूब गाई जाती है—'गुरूर्ब्रह्मा, गुरूं र्विष्णु गुरूर्देवो महेश्वरः..., और सभी इसका तात्पर्य जानने भी हैं, फिर भी वही ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वरः जो गुरू के रूप में साधारण मनुष्य की तरह वर्तते हैं उनमें जीव को पल-पल अभाव आता है। जबकि.... वह सच्चा संत तो अपने सेवक के लिए सब कुछ लुटाने ही बैठा है। जीव के लेने में सिर्फ देरी है। अपने बारीक-बारीक स्वभावों, जड़ता व बौद्धिक मूल्यांकनों के कारण वह वो प्राप्ति खो देने को भी तैयार हो जाता है। सच्चे गुरू की यही विशेषता है कि वह अपने सेवकों के सुख की हमेशा चिंता करता है।'

सच्चा गुरू total समर्पित शिष्य को अपने जैसे गुण बक्षीश में ही देता है....लोहे को सोना नहीं, बल्कि पारस बनाता है। सही अर्थ में जीवन केवल सच्चे संत के लिए हो, जीवन का कार्य केवल सच्चे संत के लिए हो, प्रेम भी केवल सच्चे संत के लिए हो, तो जीव संत का—प्रभु का प्रकाशरूप हो जाता है। प.पू. काकाजी के रूप में तो हमने अनुभव क्या—साक्षात् देखा कि गुरुहरि योगीजी महाराज को उन्होंने सर्वस्व अर्पण करा, उनके अभिप्राय की भक्ति करी तो गुरुहरि योगीजी महाराज ने उनको प्रभु का स्वरूप बना दिया। यह हमारा सौभाग्य है कि गुणातीत परम्परा के उस वारिसदार से हम संबंधित है। इतनी बड़ी दुनिया में विशेष अनुग्रह कर उन्होंने हमें चुना.... हम सब कितने भाग्यशाली? हमारे जीवन की डोर प्रत्यक्ष गुणातीत स्वरूपों ने अपने हाथ में थाम ली। सच्च गुरू हमारे संसार—हमारे व्यवहार की जिम्मा उठाने, हमारे चैतन्य के विकास के लिए परमात्मा से हमारा संबंध दृढ़ कराने की एक मंगलकारी भावना से हर एक सैकण्ड उद्यम करते रहते हैं। इनकी प्रसन्नता का फल खूब ही ऊँचा, अविनाशी व नित्य तत्व की प्राप्ति कराने के लिए होता है। सच्चा गुरू

प्रभु की ही रसधन मूर्ति में नित्य मग्न रहता है। प्रभु में से उसे जो पल-पल प्रेरणा मिलती है वही वह करता है। कभी वह अपने आपको शिष्य में बांधता नहीं है। सभी में बंधा हुआ दिखते हुए भी वह किसी का भी न रह कर, अपने आपको सिर्फ प्रभु से बांधे रखता है। स्वयं का 'स्व' परमात्मा में लीन कर चुका होता है।

हम सभी ने ऐसे गुणातीत स्वरूपों की अद्‌भुत महिमा को अपने जीवन में अनुभव किया है। हमारे चैतन्य के विकास के लिए उनके अनुपम निःस्वार्थ परिश्रम को निहारा है। अगर उनकी योजना में हम साथ देंगे, तो—जैसे अर्जुन को नर से नारायण रूप बनाकर निहाल कर दिया, वैसे वे हमें निहाल-निहाल कर देंगे। तो क्यों न उनके द्वारा दिए अनमोल मौके का—सत्संग का लाभ लें? सत्संग का फल क्या? हमारा कारोबार तरक्की को पाये, हमें नौकरी न मिलती हो वह मिल जाए, हमारे यहाँ संतान ना हो तो संतान हो जाए हमारी बीमारी टल जाए या संतों के लिये—लोग हमें मानने लगें, हमारी इज्जत करें, हमारी पधरामनियाँ करायें, हमें हार पहनायें, हमें बड़े मानने लगें, हमें पूछने लगें, हमारी शोभायात्रायें निकलने लगें, हमारे बड़े-बड़े आलीशान मंदिर बन जायें, दर्शन के लिये लम्बी-लम्बी लाईन लगें-यह सब सत्संग का फल नहीं है। वास्तव में सच्चे सत्संग की पहचान ही एकदम अलग है- जैसे आम का पौधा लगाने का 'फल' यही कि हमें 'आम मिले' ! आम के पेड़ के पत्ते-डालियों से छाया मिलें, pollution हटे, गाय-भैंस बांधने की जगह मिल जाए इत्यादि आम का पौधा लगाने का फल नहीं। वह तो नीम, पीपल, बड़ या ऐसे कोई भी पेड़ से मिल जाएगा। आम का पौधा लगाने का फल तो 'हमें आम मिले' वही कहा जाए। ठीक इसी प्रकार सत्संग का फल यही कि 'हमारे स्वभाव टलें' ! असल में शिष्य ही अपने गुरू का दर्पण होता है.....हमारे स्वभावों में परिवर्तन देख, हमारे से संबंधित लोग आश्चर्य में पड़ जाएं और उत्सुक हो जाएं कि इनको कैसे गुरू मिले हैं जिससे इनके जीवन में इतना परिवर्तन हो गया है? यही गुरू के प्रति शिष्य की सबसे बड़ी सेवा है, भक्ति है।

अब प्रश्न यह रहा कि गुणातीत पुरुष हमसे किस प्रकार के 'गुरूपूजन' की आशा-अपेक्षा रखते हैं? हम सभी जानते हैं कि प.पू. काकाजी को सुहृद्‌भाव खूब पसंद.....एकता खूब पसंद.... एकता कैसी? भले ही भिन्न-भिन्न शाखाओं पर लगें हों परन्तु एक पेड़ से जुड़े आम जैसी ! न कि एक टोकरी में साथ-साथ पड़े भिन्न-भिन्न आमों की तरह ! यूं प.पू. काकाजी को खूब पसंद कि प्रभु के हम सब एक होकर रहें और खास करके जिसके साथ हमारा मन न मिलता हो, जिसकी प्रकृति के साथ हमारा टकराव होता हो, जिसके स्वभाव, प्रकृति, क्रिया पर हमें चिड़ आया करती हो, उसे ही हम गले लगा कर रखें। हमारा मन उससे अलग होने देने की बात तो दूर, पर उससे ही एकता रखें तो भीतर की यानि दिल की—जड़ स्वभावों की माया कभी भी प्रभावित नहीं कर सकेगी और तब स्वयं को हल्के महसूस करेंगे। क्रियायोग भी भाररूप नहीं लगेगा। प्रभु के प्रति-प्रगट संत के प्रति नित्य नवीन श्रद्धा, विश्वास बढ़ता जाएगा....तो आईये, हम सब 'गुरूपूर्णिमा' के परम पवित्र अवसर पर उनकी योजना में याहोम करने के लिए कृतसंकल्प होकर स्वयं का जीवन धन्य करें व गुरूभक्ति अदा करें।

❖ ❖ ❖

अनिर्देश की गतिविधियाँ.....

प.पू. काकाजी को 'धून्य' खूब प्रिय.... प.पू. काकाजी जपयज्ञ का मूर्तस्वरूप थे....उन्हें निरंतर हमने भजन करते-करवाते हुए ही देखे थे। भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता में कहा है 'यज्ञानाम् जपयज्ञोस्मि'। सो, हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी पू. गुरूजी व पू. भाईस्वामिजी के सान्निध्य में 14 मई' 94 से 18 जून' 94 तक अनिर्देश-दिल्ली में सवा महीने की धून का अनुष्ठान रखा था। जिसमें करीब डेढ़ सौ हरिभक्त सुबह 6.30 बजे एकत्रित हो जाते थे। सुबह 6.30 से 8.00 बजे रोज़ सवा महीने तक धून, स्वामी की बातों की पारायण व प.पू. काकाजी की परावाणी का लाभ मिलता था। सभी हरिभक्त खूब उत्साह, उमंग से लाभ लेते थे, मानो जन्मों की आध्यात्मिक भूख को तृप्त करना हो ! पू. गुरूजी स्वामी की बातों व प.पू. काकाजी की परावाणी के रहस्य खोल-खोल कर, उदाहरण देकर समझाते थे। यूं कहो कि इस अनुष्ठान द्वारा पू. गुरूजी ने सारे साल के लिए सभी की बैटरी चार्ज कर दी है.....सभी का भजन के प्रति, कथावार्ता के प्रति उत्साह उमंग देखकर, खुश होकर 12 जून' 94-प.पू. काकाजी के प्राकट्य दिन पर पू. गुरूजी ने एक लॉटरी prize scheme निकाली। वह यह थी कि इतने सारे हरिभक्त regular आते थे, सो सभी को तो prize देना मुश्किल। इसलिए gents, ladies में चार-चार prize रखे थे और बाकी सभी को consolation prize दिया। चूँकि बच्चे भी उमंग से सुबह-सुबह अपने माता-पिता के साथ आते थे, सो बच्चों में भी लड़के व लड़कियों में एक-एक prize और बाकी सब consolation prize दिया गया। पू. गुरूजी को भक्तों को भजन करवाने की कैसी गरज कि सभी को भजन की उमंग बरकरार रहे और इस अनुष्ठान की अगले वर्ष तक स्मृति रहे उस हेतु सब को ये prize दिए...पू. गुरूजी का बस एक ही उद्यम कि हरिभक्तों किसी भी तरह प्रभु भजन से, सत्संग से जुड़े रहें.....

और... इस बार अनुष्ठान की पूर्णाहुति के रूप में अनिर्देश द्वारा पूरे गुणातीत समाज में एक नई ही शुरुआत की गई। वह नई शुरूआत है 'स्वामिनारायण जागरण' की, जिसका नाम पू. गुरूजी ने 'अभूतपूर्व ! मानो ऐसा जागरण पहले कभी हुआ ही नहीं। साथ ही रहस्य दिया.....'नाम नारायण दा, सुमिरन स्वामी दा'। आमतौर पर जागरणों में हम जो खूब जोर-जोर से और जिस ढंग से भजन गाते हैं वे भजन हमारे जीवन में परिवर्तन नहीं करते, प्रभाव नहीं डालते.....उन्हें केवल गाना-बजाना ही माना जाये। वचनामृत गढ़डा प्रथम प्रकरण 22 में श्रीजी महाराज ने स्पष्ट कहा है कि 'स्मृतिरहित भजन गाना न गाए बराबर है'। परन्तु, यदि उन भजनों को सच्चे संत की सेरेछाया में या उनकी स्मृति सहित दिल की सच्चाई व भावना से गाएंगे तो एक ही भजन गाने से, संतों की परावाणी सुनने से हमारे जीवन में प्रभु बस जायेंगे और हमारा जीवन सार्थक हो जायेगा। इस हेतु ही यह जागरण की शुरुआत करी है। और....आश्चर्य है कि इस जागरण में करीब चार-पाँच सौ लोग खूब उमंग से, भाव से सारी रात बैठे रहे थे। जबकि आम जगरातों में ऐसा होता है कि शुरूआत के व पूर्णाहुति के समय ज्यादा लोग होते हैं बाकी सारी रात तो घर के लोग ही बैठे रहते हैं। पू. विनोदभाई (पंजाब) एवं पार्टी, पू. कुलवंत सिंह, पू. राकेशभाई, पू. निष्काम भाई, पू. ऋषिभाई, पू. मंजुल साहब, ढूंढाहेडा मंडल इत्यादि ने जिस भाव से भजन गाये उससे सभी मुग्ध होकर दिव्य वातावरण में आनंद ले रहे थे और तब सब के मुँह से निकल पड़ा-ऐसा जागरण हमने कभी नहीं देखा। इस तरह सवा महीने की शिविर की पूर्णाहुति हुई और सभी को सारे वर्ष की एक अच्छी स्मृति मिल गई...

चातुर्मास के विशेष नियम.....

विशेषनियमो धार्यश्चातुर्मास्येऽखिलैरपि। एकस्मिन् श्रावणे मासि स त्वशक्तैरस्तु मानवैः।।

अर्थात्-हमारे सभी सत्संगी चातुर्मास में विशेष नियम पालें और जो असमर्थ हो वह तो सावन एक महीने के लिए विशेष नियम पाले। –शिक्षापत्री, 76

214 वर्ष पूर्व स्वानिारायण भगवान ने शिक्षापत्री में चातुर्मास के नियमों का यूं विशेष महत्व बताया है। स्वामिनारायण भगवान का अपने भक्तों से यह नियम लेने का खूब आग्रह था और यह परम्परा आज तक चलती आयी है। शास्त्रों में भी आषाढ़ी शुक्ला एकादशी की महिमा खूब गायी गई है। स्वामिनारायण सम्प्रदाय में इस एकादशी को 'नियम की एकादशी' कहा जाता है। स्वामिश्रीजी की प्रसन्नता हेतु सभी संतों-हरिभक्तों चातुर्मास के लिए आज के दिन विशिष्ट नियम लेंगे–लेने चाहिए– भगवान स्वामिनारायण का वचन है.....**'सत्पुरूष की आज्ञानुसार जो रहता है वही आत्मसत्तारूप रहता है।'** अपने मन से भले कितना ही तप, व्रत करो वे संस्कार जरूर डालेंगे पर वे प्रकृति का परिवर्तन नहीं करेंगे, प्रारब्ध नहीं टालेंगे, शांति नहीं देंगे। प.पू. काकाजी तो कहते थे कि सत्पुरूष की आज्ञा से एक घंटी भी बजाओ तो वह आत्मसत्तारूप है।

'भगवान स्वामिनारायण की इस आज्ञा को शिरोधार्य करके इस चातुर्मास में हम निम्न नियमों को धारें। ये नियम हमें जीवभाव से ब्रह्मभाव की ओर ले जायेंगे। इन नियमों के अनुसार चलकर हमारे जीवन में परिवर्तन हो जायेगा व भगवत्स्वरूप संतों की प्रसन्नता तो मिलेगी ही, साथ ही साथ हमारी व्यवहारिक व आध्यात्मिक जवाबदारी भी प्रभु स्वयं ले लेंगे जिससे हमें नित्य नवीन अनुभव होंगे और धन्य हो जायेंगे।'

'चातुर्मास' (19 जुलाई' 94 मंगलवार से 13 नवेम्बर' 94 रविवार तक) के नियम.....

1. दैनिक हर क्रियाएँ–जैसे सुबह उठना, बोलना, स्नान करना, चाय-नाश्ता करना, भोजन करना, बाहर जाना-आना, सोना आदि का आरम्भ भगवत्स्वरूप संत की स्मृति समेत एकाध मिनट जपयज्ञ या अजपाजप करके ही करें।
2. संत का ऐसा जोग दिया उसके उपकारस्वरूप रोज सुबह उठते ही हमें मिले प्रगट गुरूहरी की स्मृति की करके 3 मिनट ध्यान में बैठकर इन्हें 'धन्यवाद-धन्यवाद' कहने का अभ्यास करना।
3. जिन्हें सुविधा हो वे-सुबह के भजन व शाम की धून व कथा में मंदिर/सत्संग केन्द्र में आयें। जो ना आ पायें वे अपने घर सुबह 15 मिनट धून एवं सायं आरती के बाद 15 मिनट धून अचूक करें।
4. मंदिर/सत्संग केन्द्र के करीब रहते हों या काम पर जाते हुए जिन्हें मंदिर/सत्संग केन्द्र रास्ते में आता हो व वे बहनें जो मंदिर आ पायें-प.पू. काकाजी के 'स्मृति स्थल' की या सत्संग केन्द्र में ठाकुर जी की रोज़ 31 प्रदक्षिणा करें और जो रोज़ ना आ पायें वे चातुर्मास दौरान मंदिर/सत्संग केन्द्र आये तब 51 प्रदिक्षणा कर जायें।

5. मंदिर/सत्संग केन्द्र से जो करीब रहते हों वे सायं आरती दर्शन करने आ जायें। जो मंदिर/सत्संग केन्द्र में ना आ पाते हों–वे घर पर परिवार में जो जो हाजिर हों सब मिलकर हर रोज सायं आरती करें।
6. हर एकादशी, शुक्ला नौमी व पूर्णिमा पर मंदिर दर्शन करने आ जायें।
7. सावन का पूरा महीना यानि 8 अगस्त सोमवार से 5 सितम्बर सोमवार तक एक बारी भोजन लें।
8. 19 जुलाई–नियम की एकादशी, 29 अगस्त-जन्माष्टमी, 15 सितम्बर जलझीलनी एकादशी व 13 नवम्बर-कार्तिकी शुक्ला एकादशी- इन चारों दिन अवश्य पक्का व्रत रखें।
9. अवतार पुरूषों व भगवत्स्वरूप संतों की जीवनी एवं वचनामृत व स्वामी की बातें जैसे अध्यात्मग्रंथों एवं 'भगवत्कृपा सत्संग पत्रिका', के मननीय लेखों का रोज़ नियम से अध्ययन करें।
10. प.पू. काकाजी को 'सुहृद्भाव' खूब पसंद था, तो हम अपने साथी मुक्तों के साथ मिलजुल कर प्रेम से रहें और हर प्रसंग पर गुणातीतस्वरूप को ही कर्ता-हर्ता मानकर उसका सहर्ष स्वीकार कर पायें इस हेतु रोज सुबह पूजा में प्रार्थना रखें।

    और

    सारे दिन में संतमान्य व्यवहार करने में कोई फर्क पड़ा हों, आपस में किसी से मिलजुल कर नहीं रह पाये हों, किसी बात पर किसी से चिड़ गए हों, किसी का कुछ चुभ गया हो-तो रात को सोते समय 10 मिनट प्रायश्चित्रूप प्रार्थना कर लें।

❖ ❖ ❖

स्वामी की बातें

334. ज्ञानी को आत्मा कहा है। सो, भगवान को जीव सौंप देना और वे जैसा कहें वैसा करना। फिर, मनजीभाई ने पूछा कि जीव सौंपने के बाद वासना टालनी पड़ती है या नहीं? तब बोले कि वासना टालनी पड़ती है और यूं उत्तर न करें, तो भगवान में दोष आए कि एक की वासना टालते हैं और एक की नहीं टालते। इसलिए ऐसा कहा नहीं जाये। आत्मनिष्ठा तथा माहात्म्य से वासना टलती है। *प्र-5,98*

335. फिर मनजीभाई ने पूछा कि ज्ञानी को भी वासना रहती होगी? स्वामी ने कहा तो शुकजी उड़े और जनकजी उड़ नहीं पाये। प्रवृत्ति का योग हो तब तक महसूस तो होगी। जैसे हम त्यागी हुए उन दिनों गांव, नदी सब कुछ ख्याल में आते थे; तो क्या वह वासना थी? वह तो जोग के कारण दिखाई देता था और बीस साल का जब फासला पड़ा तो दिखाई नहीं पड़ता। यूं प्रवृत्ति में ज्ञान वृद्धि को पाता है, अंतःकरण शुद्ध होता है लेकिन जोग से इंद्रियों की शुद्धि नहीं होती।

फिर नथु पटेल ने पूछा कि प्राप्ति में कुछ फर्क है क्या? स्वामी ने कहा-प्राप्ति में कुछ फर्क नहीं, बराबर की है। निवृत्ति वाले को इतना बढ़कर न बतायें, वह तुम मानोगे, पर दूसरे नहीं मानेंगे। इसलिए यूं उत्तर करना पड़े, लेकिन भगवान तो चाहे सो करें; उसका कोई मालिक थोड़ा है? उत्तर तो जैसा होता हो वैसा देना पड़ता है।

प्र-5,99

336. गृहस्थाश्रम में रहकर कथावार्ता करते हैं और सुनते हैं उसके तो त्रिविध ताप टल गए हैं। उसे तो सब तप हो चुके हैं और भगवान की शरण को पाया हुआ है-ऐसा भागवत में कपिलदेव भगवान ने कहा है। गृहस्थाश्रम में बहुत प्रवृत्ति और बहुत बाधायें; सो उसे अधिक कहा है। जो गृहस्थाश्रमी को भगवान की मूर्ति धार कर रहते हुए साधु का आसरा है, वह तो घर में रहते हुए सभी तीर्थों का पुण्य पा रहा है।

प्र-5,100

337. हरिशंकरभाई ने पूछा कि-लोक में तो यूं कहते हैं कि ये तो निंदा बहुत करते हैं और चालाकी से बोलते हैं सो अकल्याण होगा। उसका क्या समझना? तब कहा कि-यूं बोलने से ही तो कल्याण होता है। यह तो भगवान की करामात है। उस पर बात करी कि-रामानंदस्वामी ने संन्यासी को पूछा कि वेद कितने? तब संन्यासी ने कहा चार। फिर रामानंदस्वामी ने कहा-ब्रह्मयज्ञ को पांचवा वेद कहा है, वह मैं हूँ। यूं सच्ची बात करी, तो संन्यासी चला गया और महाराज ने घुमा-फिरा कर बात करी तो सारे देश में सत्संग हुआ। और रामानंदस्वामी के अंतर्धान होने के बाद व्यापकानंदस्वामी वगैरे को युक्ति से स्वयं के स्वरूप की पहचान कराकर सत्संग में रखा।

प्र-5,101

338. गांव में किला होता है, वैसे हमारे लिये पंचप्रणरूपी किला है। उसमें पुलिस थाने के स्थान पर नियम है। जैसे थाना किले को संभालता है वैसे नियम प्राण संभालते हैं। इसलिए नियम में जिते ढीले पड़ेगे, उतनी कठिनाईयाँ अधिक होंगी।

प्र-5,102

339. दिव्यभाव और मनुष्यभाव एक हो जाएं, तब भगवान भजने का सुख आता है।

प्र-5,103

340. समाधि में स्वरूप दिखाई देता है, वह कार्य है और प्रगट मनुष्यरूप है वह कारण है।

प्र-5,104

341. भगवान स्त्री को भोगते हों तब रजोगुण का भाग समझना और तलवार चलातें हों तब तमोगुण का भाग समझना। पर, भगवान के स्वरूप को अलग ही समझना वह ज्ञान का अंग है। जीव में भी यूं विभाग समझना।

प्र-5,105

342. आत्मनिष्ठा कि-मैं देह से अलग हूँ और देह की क्रिया मेरी नहीं तथा भगवान का माहात्म्य व संग इन तीनों से वासना निर्मूल होती है। *प्र-5,106*

343. भजन, भक्ति और कथावार्ता में सहायता हो इस कारण गौणरूप से मंदिर की क्रिया करने का महाराज का रहस्य है। पर, क्रिया प्रधान हो गई है। वह तो महाराज से मिले कोई नहीं होंगे तब राजा द्वारा, आचार्य और मूर्ति द्वारा रक्षा करेंगे।

प्र-5,107

व्रतोत्सवसूची

1. दि. 4.7.94	सोमवार	एकादशी, व्रत
2. दि. 19.7.94	मंगलवार	नियम की एकादशी, निर्जला व्रत, चातुर्मास प्रारंभ
3. दि. 22.7.94	शुक्रवार	गुरूपूर्णिमा

PUBLISHED BY SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY
A-103, Ashok Vihar-III, Swaminarayan Marg, Kakaji Lane
Delhi-110052 (India) Tel.: 7229327, 7249327
Printed at : Chowdhry Mudran Kendra, 12/3, Sri Ram Marg, South Maujpur, Delhi Tel. : 2262473